



“तुलसीदास साहित्य में सामाजिक जीवन दर्शन”

शोधार्थी :- गीरी मीना नटुगीरी

Hemchandracharya North Gujarat University, Patan
email :- goswamimeena138@gmail.com

सार:-

तुलसीदास समाजदर्शन, जनकल्याण करने वाले एवं समाजवादी जनवादी रचनाकार का दर्शन है। तुलसीदास का काव्यो में समाज दर्शन मानव समाज के कल्याण में ही निहित है। गोस्वामी तुलसीदास ने अपने समय की समाज की दुर्बलताओं को देखा था। उन्होंने अनुभव किया कि समाज केवल आर्थिक धरातल पर विपन्न नहीं, आंतरिक धरा पर भी जड़ीभूत है, ऐसे समय में मर्यादा पुरुषोत्तम राम की आवश्यकता थी। जो पारिवारिक, सामाजिक, राजनीतिक जीवन का आदर्श बन सके। जो अन्याय के विरुद्ध संघर्ष की चेतना भर सके। उन्होंने राम कथा के माध्यम से ऐसा ही आदर्श की स्थापना कर समाज को नहीं रहा बताई।

मुख्य शब्द: तुलसीदास साहित्य और सामाजिक जीवन दर्शन

भूमिका :-

प्राचीन काल से भारत की पुण्य भूमि पर महान संतो भक्तों ने वेदशास्त्र का गहन अध्ययन और तपस्या करके भारत दर्शन विचारधारा से पूर्ण विश्व का मार्गदर्शन करते रही। इन संत भक्तों में गोस्वामी तुलसीदास का नाम बड़ा सम्मान के साथ लिया जाता है। सगुण धारा के राम भक्त धारा के प्रवर्तक तुलसीदास हैं, उन्होंने अपने जीवन के विभिन्न पक्षों को निकट से देखा, समझा और परखा और बाल्यावस्था में दारुण अनुभव से महसूस किया था कि स्वानुभूति उनकी लोकानुभूति बन गई। उन्होंने अपने राम के चरण में समर्पित करके, उसके चरित्र को सूक्ष्म दृष्टि और गहन अनुभूति को पूरे जीवन में उतारा। उनका लक्ष्य राम भक्ति करना न रहकर लोकमंगल और राष्ट्रीय सेवा के लिए समर्पित कर दिया।

“आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की तत्कालीन समाज का जीवन चरित्र इस प्रकार किया है कि “समाज में धन के मर्यादा बढ़ रही थी, दरिद्रता हीनता का लक्षण समझ जाती थी। पंडितों और ज्ञानियों का समाज के साथ कोई भी संपर्क नहीं था। सारा देश विश्रृंखल, परस्पर विच्छिन्न आदर्श और लक्ष्य का हो रहा था। एक ऐसे आदमी की आवश्यकता थी जो इन परस्पर विच्छिन्न और दूर-विभ्रष्ट टुकड़े में योग-सूत्र स्थापित करें तुलसीदास का आविर्भाव ऐसे समय में ही हुआ। “ (१)

गोस्वामी तुलसीदास भारतीय समाज और संस्कृति का जहांज और उन्नयन है, तो तात्कालिक समाज में संगति हो कुरीतियों, उच्च नीच, छुआछूत, जाती पाती के भेदभाव को दूर करने के लिए गोस्वामी जी ने सामाजिक जीवन में व्यक्ति, परिवार, समाज और शासन के परस्पर संबंधों में मूल्य धर्म सामंजस्य की भूमिका को बार-बार रेखांकित करते हुए व्यक्तित्व में राम, भरत, लक्ष्मण, हनुमान आदि के आदर्श हमें जीवन को उदात्ततम परिचित कराते हैं। परिवार के लिए उन्होंने राम के परिवार का आदर्श हमारे सामने रखा। राम का आदर्श और मर्यादा का चरम रूप हमारे सामने प्रस्तुत करते हैं। इसलिए इस संदर्भ में राजपति दीक्षित ने लिखा है कि “तुलसीदास का सारा प्रयास जनता के लिए था। वह जिस समाज की कल्पना करके चले वह निःस्वार्थ, त्याग और बलिदान सीखने



वाली थी और उन्होंने लोग कल्याण के लिए राज्य सुख, राग आदि सबको निछावर कर देने वाला था। उन्होंने राजा और प्रजा के लिए आदर, वर्ण व्यवस्था का पुनः जीवित करके राम राज्य का प्रस्थापक करना था। तुलसीदास का साहित्य लोकमंगल, समन्वय भावना दोनों प्राप्त करता है। उनके साहित्य में भारतीय संस्कृति के उज्ज्वल आदर्श को अभिव्यक्ति हुई है।” (२)

१, सामाजिक चेतना:-

तुलसीदास के युग में भारतीय जनता वेद, शास्त्र, ज्ञान वैराग्य और भक्ति मार्ग को त्याग करके अनेक संप्रदायों में भटक रही थी, तुलसीदास ने इसकी कड़ी आलोचना की, और धर्म को पहचान कर राम भक्तिपरक की दृष्टिकोण समन्वय भावना के ऐसा भाव लेकर भक्ति की ज्योति जगाई। जिस समय नए-नए संप्रदायों की खींचतान के कारण आर्य धर्म व्यापक का स्वरूप आंखों से ओझल हो रहा था। उस समय तुलसीदास ने सगुण और निर्गुण दोनों भक्ति पद्धति को महत्व देते हुए सगुण को विशेष महत्व दिया। उन्होंने रामचरितमानस में लिखा है कि समाज के हर क्षेत्र में जीवन मूल्यों की स्थापना की जो प्रत्येक वर्ग, वर्ण, जाति को प्रेरित करता है।

२, पारिवारिक दर्शन:-

गोस्वामी जी ने मानस का प्रत्येक पात्रो एक आदर्श व्यक्तित्व से भरा पड़ा है, राम को आदर्श पुत्र, राजा, पति, भाई, सखा के रूप में, दशरथ आदर्श पिता के रूप में, लक्ष्मण और भरत को आदर्श भाई के रूप में, सुग्रीव, विभीषण आदर्श मित्र के रूप में, सीता को आदर्श पत्नी के रूप में, हनुमान को सेवक में रूप में प्रस्तुत कर उन्होंने सिद्ध किया है, कि समाज का कल्याण तो भी हो सकता है जबकि वे आदर्श पात्रों के अनुसार अपने धर्म का पालन करें।

३, वर्णाश्रम / मर्यादा:-

तुलसीदास का वर्णाश्रम व्यवस्था में अटूट निष्ठा थी। वह उसे सामाजिक मर्यादा और लोक चेतना का आधार मानते थे। क्योंकि वर्णाश्रम और मर्यादा का उल्लंघन से कोई समाज की प्रगति नहीं हो सकती। इसलिए वर्णाश्रम व्यवस्था की व्यापकता की उपेक्षा से प्रेरित होकर गोस्वामी जी ने लिखा है कि-“वरन् धरम नहिं आश्रम चारी।

श्रुति विरोध रत सब नर-नारी ॥ (३)

जाती- पाती, छूआछूत आदि पारस्परिक भेदभाव से हिंदू समाज पतन पर जा रहा था। इस समय में तुलसीदास ने इन रूढ़िवादी समाज को तोड़ने की बात मानस में स्पष्ट लिखी है। जैसे

“मेरे जाती- पाती न चहा काहू की जाती पाती ।

मेरे कोऊ काम को हौ कहू के काम को

साधु के और साधु के भलों के पांच सोचु कहा।

का काहू के द्वार परौ जो हौ राम को ॥ (४)

भक्त कवियों के मूल मंत्र है जाति पाति पूछे नहीं कोई हरि को बजे सो हरि को हुई, ऐसे ही तुलसीदास ने भक्ति, वर्ण, जाति, धर्म आदि के कारण किसी का बहिष्कार नहीं करती और आराध्य राम का नाम लेकर पवित्र हो जाते हैं। इसकी भक्ति श्रेष्ठ थी, पुरोहित वर्ग ने जिन लोगों के लिए उपासना और मुक्ति के द्वारा बंद कर दिए थे तुलसी ने उन्हें सबके लिए खोल दिया।



४, समाज में नारी का स्थान:-

तुलसीदास के तत्कालीन समाज में नीची जाति और नारी की स्थिति अत्यंत दयानिय थी। गोस्वामी जी ने वासना से चंगुल में मनुष्य नारी के संकेत पर नट की भर्ती विवश होकर नाचता है और स्थिति यहां तक पहुंच गई है कि 'अनुज -तनुजा' का विवेक समाप्त हो गया है। वासनाग्रस्त मनुष्य अपने माता-पिता और कौटुंबिक के प्रति कर्तव्य भूल गया है। तुलसीदास ने विरोध का प्रमाण स्वरूप उनकी यह चौपाई बार-बार उद्धृत की जाती है। "ढोल गंवार शूद्र पशु नारी सकल ताड़ना के अधिकारी।" तुलसीदास ने मान्यवर मूल्य के विघटन और नारी के प्रति हो रही शोषण को देखकर तुलसीदास ने सामाजिक एवं सांस्कृतिक परक पति सेवा का उद्देश्य माना। दूसरी तरफ

"कत विधि सृजी नारि जगमाही ।

पराधीन सपने में हूं सुख नहीं" (५)

अर्थात् पराधीन नारी कितने दुखी होती है, इसकी कठोरता क्या हो सकती है। घर के बाहर निकलने वाले स्वतंत्रता को वह बुरा समझते थे। जिन स्वतंत्रता से बिगड़ी ही नारी कहते उसे समय उनका ध्यान ऐसी स्त्रियों पर था। जो साधारण पाई गई है ।

५, लोक मंगल :-

लोकमंगल की साधना एक ऐसी साधना है जिसमें व्यक्ति को अपने समस्त स्वार्थ को त्याग करना आवश्यक हो जाता है। यदि उसमें अपने नहीं स्वार्थों विसर्जन करने का आत्मबल नहीं है, तो लोकमंगल के साधना को दूर की बात उसके मार्ग पर अग्रसर नहीं हो सकता।

तुलसीदास एक सच्चे लोक-साधक थे । उनके सभी ग्रंथ में लोकमंगल के भावना से ओत-प्रोत है। उसने संपूर्ण मानस का साहित्यिक पूर्वक अध्ययन किया है , वहीं बात को समझ सकते हैं की संपूर्ण सामाजिक समस्याओं का समाधान इसमें मिल सकता है।

तुलसीदास की साहित्य में व्यक्ति धर्म ,परिवार धर्म और समाज धर्म का विवेचन हुआ है। जिस व्यक्ति से समाज और समाज से ऊंचा लोक धर्म को मानते हुए तुलसीदास ने भारतीय सभ्यता और संस्कृति की व्याख्या की है। उनकी कविता का आधार जनता की एकता है। इस एकता के मार्ग में सांप्रदायिक होते हुए सामंतीव्यवहार आदि अनेक का विरोधी थे। तुलसीदास ने साहित्य में जीवन मूल्यों की स्थापना की है। तुलसीदास का मुख्य संदेश है "मानव प्रेम" इसलिए इन्होंने अपने युग की स्थिति या परिस्थितियों से दुखी होकर मर्यादा पुरुषोत्तम राम को आदर्श जनता के समक्ष प्रस्तुत किया है इससे समाज एवं देश में व्याप्त भावना को दूर करके एक नवीन चेतनाको जगाया।

निष्कर्ष :-

आज के युग में भी तुलसी के चिंतन की आवश्यकता है।। आज हमारे समाज जिस प्रकार भ्रष्ट हो रहा है और गिरा हुआ है। ऐसे समय में तुलसीदास लोकमंगल,समन्वयभावना और भक्तिभावना से समाज का कल्याण हो सकता है, जो बात कही वह अपने आप में अनूठी है। मानस की रचना आत्म संतोष के लिए की, राम की भक्ति के लिए की लेकिन मूलतः उसके पीछे लोग कल्याण, समन्वयभावना और राष्ट्रीयभावना का उद्देश्य रहा।

मुझे कहने दो कि आज भी तुलसी की जरूरत है। जरूरत है।तुलसी का आदर्श उनके सामाजिक जीवन के हृदय में विद्यमान रहेंगे और उनके प्रभावित करते रहेंगे।



संदर्भ:-

- १, हिंदी साहित्य की भूमिका, सं.हजारी प्रसाद त्रिवेदी पृ९८,
- २, तुलसी और उसका युग, राजपति दीक्षित, प्र. हिन्दु विश्व -
विधालय, पृष्ठ १०५
- ३, राम चरित्र मानस तुलसीदास, उत्तरकांड, दोहा, ९८/१
- ४, कवितावली, तुलसीदास, उत्तरकांड, पद, २४९
- ५, राम चरित मानस, तुलसीदास, बालकांड, दोहा १०२३



**MULTIDISCIPLINARY COSMOPOLITAN JOURNAL OF
RESEARCH**

(MUCOJOR)-2583-9829 (On-line)

International Peer Reviewed and Refereed Journal

Certification of Publication

The Board of Multidisciplinary Cosmopolitan Journal of Research (MUCOJOR) is hereby
awarding

गीरी मीना नटुगीरी

In recognition of the publication of the paper entitled

“तुलसीदास साहित्य में सामाजिक जीवन दर्शन”

Published in Volume 02, Issue 04, December 2024.

EDITOR IN CHIEF